

[2014] 1 उम. नि. प. 201

धर्म पाल और अन्य

बनाम

हरियाणा राज्य और एक अन्य

18 जुलाई, 2013

मुख्य न्यायमूर्ति अल्लमस कबीर, न्यायमूर्ति सुरिन्दर सिंह निज्जर, न्यायमूर्ति
रंजन गोगोई, न्यायमूर्ति एम. वाई. इकबाल और
न्यायमूर्ति विक्रमजीत सेन

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 (1974 का 2) – धारा 190 और धारा 173 – अपराध का संज्ञान – मजिस्ट्रेट की भूमिका – यदि मजिस्ट्रेट पुलिस रिपोर्ट से सहमत नहीं है और उसे यह विश्वास हो जाता है कि पुलिस रिपोर्ट के स्तंभ 2 में रखे गए व्यक्तियों के विरुद्ध भी विचारण बनता है तो उसे मुख्य अभियुक्त के साथ-साथ उनके विरुद्ध भी विचारण करने के लिए समन जारी करने की अधिकारिता है ।

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 (1974 का 2) – धारा 209 और धारा 193 – अपराध का संज्ञान – सेशन न्यायालय को मामले की सुपुर्दगी – यदि मजिस्ट्रेट किसी अपराध का संज्ञान करता है और उसके बाद मामला सेशन न्यायालय को सुपुर्द करता है तो उस अपराध का नए सिरे से संज्ञान करना और उसके पश्चात् समन जारी करना विधि के अनुसार नहीं होगा ।

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 (1974 का 2) – धारा 193 और धारा 319 – सेशन न्यायालय की अतिरिक्त व्यक्तियों को समन करने की शक्ति – सेशन न्यायालय को मामला सुपुर्द किए जाने पर उन व्यक्तियों के अपराधों का संज्ञान करने की भी अधिकारिता है जिन्हें अपराधियों के रूप में नामित तो नहीं किया गया है किन्तु जिनकी सह-अपराधिता अभिलेख पर उपलब्ध सामग्री से प्रकट होती है ।

प्रस्तुत मामले में नफे सिंह नामक व्यक्ति के सिवाय, जिसे अभियुक्त के रूप में दर्शाया गया था, अपीलार्थी धर्म पाल और अन्य व्यक्तियों को इस तथ्य के बावजूद कि उन्हें भी प्रथम इत्तिला रिपोर्ट में अभियुक्तों के रूप में नामित किया गया था पुलिस रिपोर्ट के स्तंभ 2 में शामिल किया गया था । पुलिस रिपोर्ट का परिशीलन करने के पश्चात्, विद्वान् प्रथम श्रेणी

न्यायिक मजिस्ट्रेट ने अपीलार्थी और तीन अन्य व्यक्तियों को, जिन्हें आरोप पत्र में अभियुक्तों के रूप में शामिल नहीं किया गया था, नफे सिंह के साथ विचारण का सामना करने के प्रयोजनार्थ समन किया। विद्वान् मजिस्ट्रेट ने संहिता की धारा 204 के अधीन समन जारी करने की कार्यवाही करने से पूर्व तात्पर्यित रूप से संहिता की धारा 190 के अधीन अपनी शक्तियों का प्रयोग करते हुए किन्तु संहिता की धारा 200 और 202 में उपदर्शित अन्य उपबंधों का अवलंब लिए बिना कार्यवाही की थी। विद्वान् मजिस्ट्रेट के आदेश को दांडिक पुनरीक्षण में अपर सेशन न्यायाधीश के समक्ष पुनरीक्षण के रूप में प्रश्नगत किया गया था जिसने विद्वान् मजिस्ट्रेट के आदेश को कायम रखा और पुनरीक्षण खारिज कर दिया। इसके पश्चात्, विद्वान् सेशन न्यायाधीश के आदेश को उच्च न्यायालय के समक्ष चुनौती दी गई थी और उसने भी विद्वान् मजिस्ट्रेट तथा सेशन न्यायाधीश द्वारा अभिव्यक्त मतों को कायम रखा और अपर सेशन न्यायाधीश द्वारा पारित उस आदेश को अभिखंडित करने के लिए संहिता की धारा 482 के अधीन अपीलार्थी के आवेदन को खारिज कर दिया था जिसके द्वारा प्रथम श्रेणी न्यायिक मजिस्ट्रेट के उस आदेश को अभिपुष्ट किया गया था जो कि अपीलार्थियों को पुलिस थाने में दंड संहिता की धारा 34 के साथ पठित धारा 307 और 323 के अधीन रजिस्ट्रीकृत तारीख 13 अक्टूबर, 1999 की प्रथम इत्तिला रिपोर्ट सं. 272 के संबंध में समन करने के लिए संहिता की धारा 190 के अधीन फाइल किए गए आवेदन में पारित किया गया था। प्रारंभ में, इस मामले की सुनवाई किशोरी सिंह और अन्य बनाम बिहार राज्य और अन्य, राजेन्द्र प्रसाद बनाम बशीर और अन्य तथा स्विट लिमिटेड बनाम दिल्ली राज्य और अन्य वाले मामलों में दो न्यायाधीशों की न्यायपीठ के विनिश्चयों में मतभेद होने के कारण तीन न्यायाधीशों की न्यायपीठ द्वारा कराने का निदेश दिया गया था। जब तीन न्यायाधीशों की न्यायपीठ ने इस मामले पर विचार करना आरंभ किया तब न्यायालय की जानकारी में यह बात लाई गई थी कि इसमें जिस प्रश्न का अवधारण किया जाना ईप्सित है उसका सीधा संबंध दो अन्य विनिश्चयों से था। प्रथम विनिश्चय किशन सिंह बनाम बिहार राज्य वाले मामले में था और दूसरा विनिश्चय रंजीत सिंह बनाम पंजाब राज्य वाले मामले में तीन न्यायाधीशों की न्यायपीठ का विनिश्चय था। रंजीत सिंह वाले विनिश्चय में किशन सिंह वाले विनिश्चय में की गई मताभिव्यक्तियों को अस्वीकार कर दिया गया था जो कि इस आशय की थी कि दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 193 के अधीन

सेशन न्यायालय को किसी मामले का संज्ञान करने और ऐसे अन्य व्यक्तियों को समन करने की शक्ति है जिसकी अपराध कारित करने में सह-अपराधिता का निष्कर्ष प्रथमदृष्ट्या अभिलेख पर उपलब्ध सामग्री से निकाला जा सकता है। किशन सिंह वाले मामले में के विनिश्चय के अनुसार सेशन न्यायालय को संहिता की धारा 193 के अधीन ऐसी शक्ति प्राप्त है। दूसरी ओर, रंजीत सिंह वाले मामले में यह अभिनिर्धारित किया गया था कि सुपुर्दगी के प्रक्रम से सेशन न्यायालय द्वारा संहिता की धारा 230 में उपदर्शित प्रक्रम पर पहुंचने तक वह न्यायालय संहिता की धारा 209 में निर्दिष्ट अभियुक्तों के संबंध में ही कार्यवाही कर सकेगा और तब तक ऐसा कोई मध्यवर्ती प्रक्रम नहीं है जो सेशन न्यायालय को अभियुक्तों की सूची में किसी अन्य व्यक्ति को शामिल करने के लिए समर्थ बनाता हो। तीन न्यायाधीशों की न्यायपीठ ने इस तथ्य का उल्लेख किया कि ऐसे निष्कर्ष का प्रभाव यह है कि आरोप पत्र के स्तम्भ 2 में नामित और विचारण के लिए प्रस्तुत न किए गए अभियुक्त के विरुद्ध सेशन न्यायाधीश द्वारा संहिता की धारा 228 के साथ पठित धारा 193 के अधीन शक्ति का प्रयोग करते हुए विचारण नहीं किया जा सकेगा। तीन न्यायाधीशों की न्यायपीठ रंजीत सिंह वाले मामले में अभिव्यक्त मतों से असहमत थी किन्तु चूंकि तीन न्यायाधीशों की न्यायपीठ ने रंजीत सिंह वाले मामले में अभिव्यक्त मत से प्रतिकूल मत अपनाया था इसलिए इस मामले की सुनवाई करने वाली तीन न्यायाधीशों की न्यायपीठ ने यह निदेश दिया कि यह मामला किसी बृहत्तर न्यायपीठ के समक्ष रखने के लिए इसे मुख्य न्यायमूर्ति के समक्ष रखा जाए। उपर्युक्त कारणों से मामला संविधान पीठ के समक्ष विचारार्थ रखा गया है। वे प्रश्न, जिन पर संविधान पीठ द्वारा विचार किया जाना अपेक्षित है, ये हैं—

(i) क्या सुपुर्दगी मजिस्ट्रेट को पुलिस रिपोर्ट से यह पता चलने पर कि मामला सेशन न्यायालय द्वारा विचारणीय है, सेशन न्यायालय को मामला सुपुर्द करने के पश्चात् कोई अन्य भूमिका निभानी होती है ? (ii) यदि मजिस्ट्रेट पुलिस रिपोर्ट से असहमत है और उसे यह विश्वास हो जाता है कि उन व्यक्तियों के विरुद्ध भी मामला बनता था जिन्हें रिपोर्ट के स्तंभ 2 में रखा गया था, तो क्या उसे पुलिस रिपोर्ट में बनाए गए मामले के संबंध में विचारण में पेश होने के लिए नफे सिंह के साथ-साथ उनके नाम शामिल करने की दृष्टि से उनके विरुद्ध भी समन जारी करने की अधिकारिता है ? (iii) क्या अपीलार्थियों के विरुद्ध समन जारी करने का विनिश्चय करने पर मजिस्ट्रेट से परिवाद मामले की प्रक्रिया का अनुसरण करना और उन्हें

विचारण के लिए सेशन न्यायालय को सुपुर्द करने से पूर्व साक्ष्य लेना अपेक्षित है या क्या उसका ऐसी प्रक्रिया का अनुसरण किए बिना उन्हें समन जारी करना न्यायोचित था ? (iv) क्या सेशन न्यायाधीश दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 193 के अधीन मूल अधिकारिता वाले न्यायालय के रूप में समन जारी कर सकता है ? (v) क्या मामला सेशन न्यायालय को सुपुर्द कर दिए जाने पर सेशन न्यायाधीश संहिता की धारा 193 के अधीन पृथक् रूप से समन जारी कर सकेगा या क्या उसे उसका अवलंब लेने के लिए तब तक प्रतीक्षा करनी होगी जब तक मामला संहिता की धारा 319 के अधीन वाले प्रक्रम तक नहीं पहुंच जाता ? (vi) क्या रंजीत सिंह वाले मामले का विनिश्चय, जिसके द्वारा किशन सिंह वाले विनिश्चय को अपास्त कर दिया गया था, सही विनिश्चित किया गया था अथवा नहीं ? उच्चतम न्यायालय द्वारा तदनुसार आदेश करते हुए,

अभिनिर्धारित – मजिस्ट्रेट को दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 173(3) के अधीन उसके समक्ष प्रस्तुत की गई पुलिस रिपोर्ट का संज्ञान लेने पर सेशन न्यायालय को मामला सुपुर्द करते समय भूमिका निभानी होती है । यदि मजिस्ट्रेट पुलिस रिपोर्ट से असहमत होता है तो उसके पास दो विकल्प हैं । वह उस अभ्यापत्ति याचिका के आधार पर जो फाइल की जा सकती है, कार्यवाही कर सकता है या वह पुलिस रिपोर्ट से असहमति दिखाते हुए आदेशिका जारी कर सकता है और अभियुक्तों को समन कर सकता है । इसके पश्चात्, यदि उसका यह समाधान हो जाता है कि रिपोर्ट के स्तंभ 2 में नामित व्यक्तियों के विरुद्ध कार्यवाही करने के लिए मामला बनता था तो उक्त व्यक्तियों के विरुद्ध विचारण करने की कार्यवाही कर सकेगा या यदि उसका यह समाधान हो गया था कि ऐसा मामला साबित हो गया था जो कि सेशन न्यायालय द्वारा विचारणीय था तो वह मामले पर आगे कार्यवाही करने के लिए उसे सेशन न्यायालय को सुपुर्द कर सकेगा । (पैरा 24)

मजिस्ट्रेट द्वारा कौन सी प्रक्रिया का अनुसरण किया जाना है यदि उसका यह समाधान हो गया था कि पुलिस द्वारा प्रस्तुत की गई अंतिम रिपोर्ट के बावजूद विचारण करने के लिए प्रथमदृष्ट्या मामला साबित हो गया था । ऐसी दशा में, यदि मजिस्ट्रेट ने अभियुक्त व्यक्तियों के विरुद्ध कार्यवाही करने का विनिश्चय किया था तो उसे पुलिस रिपोर्ट के आधार पर ही कार्यवाही करनी होगी और या तो मामले की जांच करनी होगी या यदि वह सेशन न्यायालय द्वारा विचारणीय पाया गया था उसे सेशन

न्यायालय को सुपुर्द करना होगा । (पैरा 25)

इन दलीलों को स्वीकार नहीं किया जा सकता है कि पुलिस रिपोर्ट प्राप्त होने पर, जिससे यह दर्शित होता था कि मामला सेशन न्यायालय द्वारा विचारणीय है, मजिस्ट्रेट को मामला सेशन न्यायालय के विचारण के लिए सुपुर्द करने के सिवाय कोई अन्य कृत्य नहीं करना था और सेशन न्यायालय ही विचारण में किसी अन्य व्यक्ति को अभियुक्त के रूप में शामिल करने के लिए संहिता की धारा 319 का अवलंब ले सकता था । ऐसे निर्वचन के प्रभाव के परिणामस्वरूप ऐसी स्थिति उत्पन्न होगी जहां पुलिस रिपोर्ट के स्तंभ 2 में नामित व्यक्तियों पर न तो सुपुर्दगी मजिस्ट्रेट का और न ही सेशन न्यायालय का कोई नियंत्रण होगा जब तक विचारण धारा 319 के प्रक्रम तक नहीं पहुंच जाता । इसके अलावा, यदि सेशन न्यायाधीश अंततोगत्वा पुलिस रिपोर्ट के स्तंभ 2 में नामित व्यक्तियों के विरुद्ध सामग्री पाता है तो ऐसे व्यक्तियों के विरुद्ध विचारण नए सिरे से आरंभ किया जाना होगा जिसके परिणामस्वरूप न केवल विचारण दोहराया जाएगा बल्कि उसमें देरी भी होगी । (पैरा 22)

कोई सेशन न्यायालय आरंभिक अधिकारिता वाले न्यायालय के रूप में किसी अपराध का संज्ञान तब तक नहीं करेगा जब तक मामला इस संहिता के अधीन मजिस्ट्रेट द्वारा उसके सुपुर्द नहीं कर दिया गया है । उक्त उपबंध में यह आदिष्ट है कि प्रथमतः मामला मजिस्ट्रेट द्वारा सेशन न्यायालय को सुपुर्द किया जाना चाहिए । दूसरी शर्त यह है कि मामला उसे सुपुर्द किए जाने के पश्चात् ही सेशन न्यायालय आरंभिक अधिकारिता का प्रयोग करते हुए अपराध का संज्ञान कर सकता है । यद्यपि यह बताने का प्रयास किया गया है कि धारा 193 में उपदर्शित संज्ञान किसी अपराध के संज्ञान के संबंध में नहीं है बल्कि विद्वान् मजिस्ट्रेट द्वारा पारित सुपुर्दगी आदेश के संबंध में है, तथापि, धारा 193 के इन स्पष्ट शब्दों को ध्यान में रखते हुए कि सेशन न्यायालय उक्त धारा के अधीन अपराधों का संज्ञान कर सकता है हम इस दलील को स्वीकार करने के लिए तैयार नहीं हैं । (पैरा 26)

यह सुस्थापित है कि किसी अपराध का संज्ञान केवल एक बार किया जा सकता है । यदि मजिस्ट्रेट अपराध का संज्ञान करता है और इसके बाद मामले को सेशन न्यायालय को सुपुर्द करता है तो अपराध का नए सिरे से संज्ञान करने और इसके पश्चात् समन जारी करने की कार्यवाही करने का

प्रश्न विधि के अनुसार नहीं है। यदि अपराध का संज्ञान किया जाना है तो वह या तो मजिस्ट्रेट द्वारा या सेशन न्यायालय द्वारा किया जा सकेगा। संहिता की धारा 193 में अत्यंत स्पष्ट रूप से यह उपदर्शित किया गया है कि जब विद्वान् मजिस्ट्रेट द्वारा मामला सेशन न्यायालय को सुपुर्द कर दिया जाता है तब सेशन न्यायालय आरंभिक अधिकारिता ग्रहण कर लेता है और सब कुछ उस अधिकारिता के ग्रहण करने के बाद होता है। अतः, धारा 209 के उपबंधों का पठन इस रूप में करना होगा कि विद्वान् मजिस्ट्रेट पुलिस रिपोर्ट से यह पता चलने पर कि मामला सेशन न्यायालय द्वारा विचारणीय है, मामला सेशन न्यायालय को सुपुर्द करने की निष्क्रिय भूमिका निभाता है। मजिस्ट्रेट द्वारा अंशतः संज्ञान करने और अंशतः विद्वान् सेशन न्यायाधीश द्वारा संज्ञान करने का कोई प्रश्न नहीं हो सकता है। (पैरा 27)

सेशन न्यायालयों को उसे मामला सुपुर्द करने पर उन व्यक्तियों के विरुद्ध अपराधों का संज्ञान करने की अधिकारिता होती है जिन्हें अपराधियों के रूप में नामित नहीं किया गया है किन्तु जिनकी मामले में सह-अपराधिता अभिलेख पर उपलब्ध सामग्री से प्रकट होगी। अतः, सेशन न्यायाधीश धारा 209 के अधीन सुपुर्दगी पर साक्ष्य लेखबद्ध किए बिना भी पुलिस रिपोर्ट के स्तंभ 2 में दर्शाए गए व्यक्तियों को उन व्यक्तियों के साथ, जिन्हें पहले ही नामित किया गया है, विचारण में प्रस्तुत होने के लिए समन कर सकेगा। (पैरा 28)

इस दलील को भी स्वीकार नहीं किया जा सकता है कि सेशन न्यायालय के पास उन व्यक्तियों के विरुद्ध कार्यवाही करने से पूर्व जिनके विरुद्ध विद्वान् मजिस्ट्रेट द्वारा मामला सेशन न्यायालय को सुपुर्द करते समय भेजे गए मामले के कागजपत्रों में अंतर्विष्ट सामग्री से प्रथमदृष्ट्या मामला साबित होता है, उस समय तक प्रतीक्षा करने के सिवाय कोई विकल्प नहीं होगा जब तक मामला दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 319 के प्रक्रम तक नहीं पहुंच जाता है। (पैरा 29)

अनुसृत निर्णय

पैरा

[1993]	(1993) 2 एस. सी. सी. 16 :	1,4,8,16,23,
	किशन सिंह बनाम बिहार राज्य।	28,30,31

उलटा गया निर्णय

[1998]	(1998) 7 एस. सी. सी. 149 : रंजीत सिंह बनाम पंजाब राज्य ।	1,2,4,8, 17,30,31
--------	---	----------------------

निर्दिष्ट निर्णय

[2004]	(2004) 13 एस. सी. सी. 11 : किशोरी सिंह और अन्य बनाम बिहार राज्य और अन्य ;	1,17
[2001]	(2001) 8 एस. सी. सी. 522 : राजेन्द्र प्रसाद बनाम बशीर और अन्य ;	1
[2001]	(2001) 6 एस. सी. सी. 670 : स्विल लिमिटेड बनाम दिल्ली राज्य और अन्य ;	1,15
[1997]	(1997) 2 एस. सी. सी. 397 : रश्मि कुमार बनाम महेश कुमार भादा ;	13
[1996]	(1996) 4 एस. सी. सी. 495 : राज किशोर प्रसाद बनाम बिहार राज्य और एक अन्य ;	15
[1989]	(1989) 2 एस. सी. सी. 132 : इंडियन कैरेट प्राइवेट लिमिटेड बनाम कर्नाटक राज्य और एक अन्य ;	14
[1967]	[1967] 3 एस. सी. आर. 668 : अभिनंदन झा बनाम दिनेश मिश्रा ।	14

अपीली (दांडिक) अधिकारिता : 2003 की दांडिक अपील सं. 148
और 2004 की दांडिक अपील सं.
865, 2005 की दांडिक अपील
सं. 1334 तथा 2006 की दांडिक अपील सं. 537.

2002 के दांडिक प्रकीर्ण सं. 21505-एम में चंडीगढ़ स्थित पंजाब
और हरियाणा उच्च न्यायालय के तारीख 27 मई, 2002 के निर्णय और
आदेश के विरुद्ध अपीलें ।

**उपस्थित होने वाले
पक्षकारों की ओर से**

सर्वश्री बृजेन्द्र चाहर, ज्येष्ठ अधिवक्ता,
राजीव गौड़ 'नसीम', अपर महाधिवक्ता,
(श्रीमती) ज्योति चाहर, विनय गर्ग, मनु

शंकर मिश्रा, नवीन कुमार, आलोक कुमार, सिद्धार्थ दवे, (सुश्री) जयन्तीबेन, ए. ओ., (सुश्री) विभा दत्ता मखीजा, कमल मोहन गुप्ता, गोपाल सिंह, मनीष कुमार, चन्दन कुमार, जे. पी. ढांढा, शिशिर पिनाकी, रवि चन्द्र प्रकाश, मुकेश कुमार सिंह, पुरुषोत्तम त्रिपाठी, (सुश्री) फिज़ा मुनीष, अमित कुमार, के. के. त्यागी, इमरान आलम, इफ्तिख्यार अहमद, पी. नरसिंहन, राहुल शुक्ला, (सुश्री) बचिता बी. शुक्ला और डा. कैलाश चन्द

न्यायालय का निर्णय मुख्य न्यायमूर्ति अल्लमस कबीर ने दिया ।

मु. न्या. कबीर – प्रारंभ में, इस मामले की सुनवाई किशोरी सिंह और अन्य बनाम बिहार राज्य और अन्य¹, राजेन्द्र प्रसाद बनाम बशीर और अन्य² तथा स्विन लिमिटेड बनाम दिल्ली राज्य और अन्य³ वाले मामलों में दो न्यायाधीशों की न्यायपीठ के विनिश्चयों में मतभेद होने के कारण तीन न्यायाधीशों की न्यायपीठ द्वारा कराने का निदेश दिया गया था । जब तीन न्यायाधीशों की न्यायपीठ ने तारीख 1 सितम्बर, 2004 को इस मामले पर विचार करना आरंभ किया तो न्यायालय की जानकारी में यह बात लाई गई थी कि इसमें जिस प्रश्न का अवधारण किया जाना ईप्सित है उसका सीधा संबंध दो अन्य विनिश्चयों से था । प्रथम विनिश्चय किशन सिंह बनाम बिहार राज्य⁴ वाले मामले में था और दूसरा विनिश्चय रंजीत सिंह बनाम पंजाब राज्य⁵ वाले मामले में तीन न्यायाधीशों की न्यायपीठ का विनिश्चय था । रंजीत सिंह (उपर्युक्त) वाले विनिश्चय में किशन सिंह (उपर्युक्त) वाले विनिश्चय में की गई मताभिव्यक्तियों को अस्वीकार कर दिया गया था जो कि इस आशय की थी कि दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 (जिसे इसमें इसके पश्चात् “संहिता” कहा गया है) की धारा

¹ (2004) 13 एस. सी. सी. 11.

² (2001) 8 एस. सी. सी. 522.

³ (2001) 6 एस. सी. सी. 670.

⁴ (1993) 2 एस. सी. सी. 16.

⁵ (1998) 7 एस. सी. सी. 149.

193 के अधीन सेशन न्यायालय को किसी मामले का संज्ञान करने और ऐसे अन्य व्यक्तियों को समन करने की शक्ति है जिसकी अपराध कारित करने में सह-अपराधिता का निष्कर्ष प्रथमदृष्ट्या अभिलेख पर उपलब्ध सामग्री से निकाला जा सकता है। **किशन सिंह** (उपर्युक्त) वाले मामले में के विनिश्चय के अनुसार सेशन न्यायालय को संहिता की धारा 193 के अधीन ऐसी शक्ति प्राप्त है। दूसरी ओर, **रंजीत सिंह** (उपर्युक्त) वाले मामले में यह अभिनिर्धारित किया गया था कि सुपुर्दगी के प्रक्रम से सेशन न्यायालय द्वारा संहिता की धारा 230 में उपदर्शित प्रक्रम पर पहुंचने तक वह न्यायालय संहिता की धारा 209 में निर्दिष्ट अभियुक्तों के संबंध में ही कार्यवाही कर सकेगा और तब तक ऐसा कोई मध्यवर्ती प्रक्रम नहीं है जो सेशन न्यायालय को अभियुक्तों की सूची में किसी अन्य व्यक्ति को शामिल करने के लिए समर्थ बनाता हो।

2. तीन न्यायाधीशों की न्यायपीठ ने इस तथ्य का उल्लेख किया कि ऐसे निष्कर्ष का प्रभाव यह है कि आरोप पत्र के स्तम्भ 2 में नामित और विचारण के लिए प्रस्तुत न किए गए अभियुक्त के विरुद्ध सेशन न्यायाधीश द्वारा संहिता की धारा 228 के साथ पठित धारा 193 के अधीन शक्ति का प्रयोग करते हुए विचारण नहीं किया जा सकेगा। दूसरे शब्दों में, भले ही जब सेशन न्यायालय ने आरोप विरचित करते समय अपने विवेक का प्रयोग किया था और अभिलेख पर उपलब्ध सामग्री से इस निष्कर्ष पर पहुंचा था कि वास्तव में स्तंभ 2 में दर्शाए गए व्यक्तियों के विरुद्ध भी अपराध बनता है, तब भी उसे उनके विरुद्ध कार्यवाही करने की कोई शक्ति नहीं है और ऐसे व्यक्तियों को विचारण में अभियुक्तों के रूप में सम्मिलित करने के लिए तब तक प्रतीक्षा करनी होगी जब तक मामला संहिता की धारा 319 के अधीन प्रक्रम तक नहीं पहुंच जाता है यदि पेश किए गए साक्ष्य से उनकी सह-अपराधिता भी साबित हो गई थी। जैसा कि तीन न्यायाधीशों की न्यायपीठ ने उल्लेख किया है, इसका अगला प्रभाव यह था कि मजिस्ट्रेट द्वारा विचारणीय कम गंभीर अपराधों में यदि वह पुलिस रिपोर्ट से असहमत होता है तो उसे उन अभियुक्तों के विरुद्ध जो स्तंभ 2 में उल्लिखित हैं, कार्यवाही करने की शक्ति होगी किन्तु सेशन न्यायालय द्वारा विचारणीय गंभीर अपराधों के संबंध में न्यायालय को संहिता की धारा 319 के प्रक्रम पर पहुंचने तक प्रतीक्षा करनी होगी। तीन न्यायाधीशों की न्यायपीठ **रंजीत सिंह** (उपर्युक्त) वाले मामले में अभिव्यक्त मतों से असहमत थी किन्तु चूंकि तीन न्यायाधीशों की न्यायपीठ ने **रंजीत सिंह**

(उपर्युक्त) वाले मामले में अभिव्यक्त मत से प्रतिकूल मत अपनाया था इसलिए इस मामले की सुनवाई करने वाली तीन न्यायाधीशों की न्यायपीठ ने तारीख 20 जनवरी, 2005 के अपने आदेश द्वारा यह निदेश दिया कि यह मामला किसी बृहत्तर न्यायपीठ के समक्ष रखने के लिए इसे मुख्य न्यायमूर्ति के समक्ष रखा जाए ।

3. उपर्युक्त कारणों से मामला संविधान पीठ के समक्ष विचारार्थ रखा गया है ।

4. वे प्रश्न, जिन पर संविधान पीठ द्वारा विचार किया जाना अपेक्षित है, निम्नलिखित रूप में हैं : —

(i) क्या सुपुर्दगी मजिस्ट्रेट को पुलिस रिपोर्ट से यह पता चलने पर कि मामला सेशन न्यायालय द्वारा विचारणीय है, सेशन न्यायालय को मामला सुपुर्द करने के पश्चात् कोई अन्य भूमिका निभानी होती है ?

(ii) यदि मजिस्ट्रेट पुलिस रिपोर्ट से असहमत है और उसे यह विश्वास हो जाता है कि उन व्यक्तियों के विरुद्ध भी मामला बनता था जिन्हें रिपोर्ट के स्तंभ 2 में रखा गया था, तो क्या उसे पुलिस रिपोर्ट में बनाए गए मामले के संबंध में विचारण में पेश होने के लिए नफे सिंह के साथ-साथ उनके नाम शामिल करने की दृष्टि से उनके विरुद्ध भी समन जारी करने की अधिकारिता है ?

(iii) क्या अपीलार्थियों के विरुद्ध समन जारी करने का विनिश्चय करने पर मजिस्ट्रेट से परिवाद मामले की प्रक्रिया का अनुसरण करना और उन्हें विचारण के लिए सेशन न्यायालय को सुपुर्द करने से पूर्व साक्ष्य लेना अपेक्षित है या क्या उसका ऐसी प्रक्रिया का अनुसरण किए बिना उन्हें समन जारी करना न्यायोचित था ?

(iv) क्या सेशन न्यायाधीश दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 193 के अधीन मूल अधिकारिता वाले न्यायालय के रूप में समन जारी कर सकता है ?

(v) क्या मामला सेशन न्यायालय को सुपुर्द कर दिए जाने पर सेशन न्यायाधीश संहिता की धारा 193 के अधीन पृथक् रूप से समन जारी कर सकेगा या क्या उसे उसका अवलंब लेने के लिए तब तक

प्रतीक्षा करनी होगी जब तक मामला संहिता की धारा 319 के अधीन वाले प्रक्रम तक नहीं पहुंच जाता ?

(vi) क्या रंजीत सिंह (उपर्युक्त) वाले मामले का विनिश्चय, जिसके द्वारा किशन सिंह (उपर्युक्त) वाले विनिश्चय को अपास्त कर दिया गया था, सही विनिश्चित किया गया था अथवा नहीं ?

5. वे तथ्य जिनके परिणामस्वरूप विद्वान् मजिस्ट्रेट ने वह आदेश किया जिसे बाद में सेशन न्यायाधीश और उच्च न्यायालय के समक्ष पुनरीक्षण में चुनौती दी गई थी, ये हैं कि नफे सिंह नामक व्यक्ति के सिवाय, जिसे अभियुक्त के रूप में दर्शाया गया था, अपीलार्थी धर्म पाल और अन्य व्यक्तियों को इस तथ्य के बावजूद कि उन्हें भी प्रथम इत्तिला रिपोर्ट में अभियुक्तों के रूप में नामित किया गया था पुलिस रिपोर्ट के स्तंभ 2 में शामिल किया गया था। पुलिस रिपोर्ट का परिशीलन करने के पश्चात्, विद्वान् प्रथम श्रेणी न्यायिक मजिस्ट्रेट, हांसी ने अपीलार्थी और तीन अन्य व्यक्तियों को, जिन्हें आरोप पत्र में अभियुक्तों के रूप में शामिल नहीं किया गया था, नफे सिंह के साथ विचारण का सामना करने के प्रयोजनार्थ समन किया। विद्वान् मजिस्ट्रेट ने संहिता की धारा 204 के अधीन समन जारी करने की कार्यवाही करने से पूर्व तात्पर्यित रूप से संहिता की धारा 190 के अधीन अपनी शक्तियों का प्रयोग करते हुए किन्तु संहिता की धारा 200 और 202 में उपदर्शित अन्य उपबंधों का अवलंब लिए बिना कार्यवाही की थी।

6. विद्वान् मजिस्ट्रेट के आदेश को 2000 के दंडिक पुनरीक्षण सं. 27 में हिसार के अपर सेशन न्यायाधीश के समक्ष पुनरीक्षण के रूप में प्रश्नगत किया गया था, जिसने विद्वान् मजिस्ट्रेट के आदेश को कायम रखा और पुनरीक्षण खारिज कर दिया। इसके पश्चात्, विद्वान् सेशन न्यायाधीश के आदेश को उच्च न्यायालय के समक्ष चुनौती दी गई थी और उसने भी विद्वान् मजिस्ट्रेट तथा सेशन न्यायाधीश द्वारा अभिव्यक्त मतों को कायम रखा और हिसार के अपर सेशन न्यायाधीश द्वारा पारित तारीख 25 मार्च, 2002 के उस आदेश को अभिखंडित करने के लिए संहिता की धारा 482 के अधीन अपीलार्थी के आवेदन को खारिज कर दिया था जिसके द्वारा प्रथम श्रेणी न्यायिक मजिस्ट्रेट, हांसी के तारीख 21 जुलाई, 2000 के उस आदेश को अभिपुष्ट किया गया था जो कि अपीलार्थियों को नारनौंद पुलिस थाने में भारतीय दंड संहिता की धारा 34 के साथ पठित धारा 307 और

323 के अधीन रजिस्ट्रीकृत तारीख 13 अक्टूबर, 1999 की प्रथम इत्तिला रिपोर्ट सं. 272 के संबंध में समन करने के लिए संहिता की धारा 190 के अधीन फाइल किए गए आवेदन में पारित किया गया था ।

7. धर्म पाल और अन्य व्यक्तियों द्वारा फाइल की गई 2003 की दांडिक अपील सं. 148 में अपीलार्थियों की ओर से उपस्थित होने वाले विद्वान् ज्येष्ठ अधिवक्ता श्री बृजेन्द्र चाहर ने यह दलील दी कि विद्वान् सेशन न्यायाधीश और उच्च न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित करके त्रुटि की है कि सुपुर्दगी मजिस्ट्रेट उन अपीलार्थियों को समन करने के लिए, जिन्हें आरोप पत्र में अभियुक्तों के रूप में नहीं दर्शाया गया है, अभ्यापत्ति याचिका ग्रहण करने के लिए सक्षम था । श्री चाहर ने यह दलील दी कि मजिस्ट्रेट ने अभ्यापत्ति याचिका की आड़ में अनन्य रूप से सेशन न्यायालय द्वारा विचारणीय किसी मामले में संहिता की धारा 319 के अधीन सेशन न्यायाधीश की शक्तियों का अनाधिकार प्रयोग किया था । श्री चाहर ने इस बात पर जोर दिया कि जैसे ही मजिस्ट्रेट के समक्ष पुलिस रिपोर्ट फाइल कर दी गई थी, जिससे यह प्रकट होता था कि कोई ऐसा अपराध कारित किया गया था जो अनन्य रूप से सेशन न्यायालय द्वारा विचारणीय था, तब मजिस्ट्रेट का उसे सेशन न्यायालय को सुपुर्द करने के सिवाय कोई अन्य कृत्य नहीं था भले ही पुलिस रिपोर्ट को देखने से उसे यह विश्वास हो गया था कि पुलिस रिपोर्ट के स्तंभ 2 में उल्लिखित अन्य व्यक्तियों को भी विचारण के लिए भेजना आवश्यक है । श्री चाहर ने यह दलील दी कि मजिस्ट्रेट ने अपनी अधिकारिता से परे कार्य किया था और सेशन न्यायाधीश और उच्च न्यायालय दोनों ने विद्वान् मजिस्ट्रेट के आदेश को कायम रखते हुए संहिता की धारा 190, 193 और 209 के उपबंधों का गलत अर्थ लगाया था । इस संबंध में, श्री चाहर ने 1898 की दंड प्रक्रिया संहिता के उपबंधों और प्रस्तुत संहिता में, जो 1898 की संहिता के स्थान पर रखी गई थी, उनके तत्स्थानी उपबंधों पर ध्यान केन्द्रित किया । विद्वान् काउन्सेल ने यह इंगित किया कि 1898 की संहिता की धारा 207क में मजिस्ट्रेट से सेशन न्यायालय को मामला सुपुर्द करने से पूर्व आज्ञापक रूप से लघु विचारण करना अपेक्षित है जबकि 1973 की संहिता की धारा 190 के अधीन अधिकारिता रखने वाला मजिस्ट्रेट किसी भी अपराध का संज्ञान निम्नलिखित दशाओं में कर सकता है :—

(क) उन तथ्यों का, जिनसे ऐसा अपराध बनता है परिवाद प्राप्त

होने पर ;

(ख) ऐसे तथ्यों के बारे में पुलिस रिपोर्ट पर ;

(ग) पुलिस रिपोर्ट से भिन्न किसी व्यक्ति से प्राप्त इस इत्तिला पर या स्वयं अपनी इस जानकारी पर कि ऐसा अपराध किया गया है ।

8. श्री चाहर ने यह दलील दी कि दोनों उपबंधों में जो अंतर है वह साशय है और वह मजिस्ट्रेट के समक्ष कार्यवाहियों को छोटा करने की दृष्टि से किया गया है । विद्वान् काउन्सेल ने यह दलील दी कि पुरानी संहिता के निबंधनानुसार, विचारण के दो प्रक्रम अनुध्यात किए गए थे जिन्हें 1973 की संहिता के संशोधित उपबंधों द्वारा समाप्त कर दिया गया था । इन परिस्थितियों में, **रंजीत सिंह** (उपर्युक्त) वाले मामले में अभिव्यक्त मत **किशन सिंह** (उपर्युक्त) वाले विनिश्चय के मुकाबले सही प्रतीत होता है जिसमें यह अभिनिर्धारित किया गया था कि सेशन न्यायालय को संहिता की धारा 193 के अधीन अपराध का संज्ञान करने और ऐसे अन्य व्यक्तियों को समन करने की शक्ति प्राप्त थी जिनकी अपराध कारित करने में सह-अपराधिता का पता प्रथमदृष्ट्या अभिलेख पर उपलब्ध सामग्री से लगाया जा सकेगा ।

9. उपर्युक्त अपील में दी गई दलीलें नौशाद अली द्वारा फाइल की गई 2004 की दांडिक अपील सं. 865 में भी दोहराई गई थीं क्योंकि उक्त अपील में अंतर्वलित प्रश्न लगभग वही है जो धर्म पाल और अन्य व्यक्तियों द्वारा फाइल की गई अपील में अंतर्वलित है ।

10. 2005 की दांडिक अपील सं. 1334 में अपीलार्थी की ओर से उपस्थित होने वाले विद्वान् ज्येष्ठ अधिवक्ता श्री अमरेन्द्र शरण ने यह अतिरिक्त आधार अपनाया कि विद्वान् मजिस्ट्रेट का आदेश, जैसा कि वह वरिष्ठ न्यायालयों द्वारा कायम रखा गया है, संविधान के अनुच्छेद 21 के उपबंधों का अतिक्रमणकारी था चूंकि विद्वान् मजिस्ट्रेट ने संहिता की धारा 190, 200 और 202 में और इसके पश्चात् धारा 204 में उपदर्शित प्रक्रिया का अनुसरण किए बिना स्तंभ 2 में सम्मिलित व्यक्तियों को समन जारी किए थे । श्री शरण ने यह दलील दी कि जब मजिस्ट्रेट ने अन्वेषक प्राधिकारियों द्वारा फाइल किए गए आरोप पत्र के संबंध में फाइल की गई अभ्यापत्ति याचिका के आधार पर संज्ञान करने का विनिश्चय किया था तब

उसे उपर्युक्त संहिता की धारा 190(1)(क) के अर्थान्तर्गत किसी परिवाद के आधार पर संज्ञान करने से संबंधित उपबंधों का अवलंब लेना चाहिए था। चूंकि ऐसा नहीं किया गया था इसलिए अपीलार्थियों के विरुद्ध समन जारी करने का निदेश देने वाला आदेश संविधान के अनुच्छेद 21 के उपबंधों के अतिक्रमण में था और इसलिए वह अपास्त किए जाने योग्य है।

11. 2003 की दांडिक अपील सं. 148 और 2013 की दांडिक प्रकीर्ण याचिका सं. 12963 में अपीलार्थियों की ओर से उपस्थित होने वाले विद्वान् अधिवक्ता श्री सिद्धार्थ दवे ने यह दलील दी कि मजिस्ट्रेट के उस आदेश का मूल्यांकन करने के लिए जिसके द्वारा सेशन द्वारा विचारणीय मामले में समन जारी किए गए थे, संहिता की धारा 204 के अधीन अपीलार्थियों को समन जारी करने वाली मजिस्ट्रेट की शक्ति के स्रोत की परीक्षा करना आवश्यक है। श्री दवे ने इस बात पर जोर दिया कि ऐसे समन जारी करने संबंधी मजिस्ट्रेट की शक्ति का स्रोत केवल संहिता की धारा 190(1)(ख) में पाया जा सकता है, जिसमें निम्नलिखित रूप में उपबंध किया गया है :—

“190. मजिस्ट्रेटों द्वारा अपराधों का संज्ञान – (1) इस अध्याय के उपबंधों के अधीन रहते हुए, कोई प्रथम वर्ग मजिस्ट्रेट और उपधारा (2) के अधीन विशेषतया सशक्त किया गया कोई द्वितीय वर्ग मजिस्ट्रेट, किसी भी अपराध का संज्ञान निम्नलिखित दशाओं में कर सकता है :—

(क) उन तथ्यों का, जिनसे ऐसा अपराध बनता है परिवाद प्राप्त होने पर ;

(ख) ऐसे तथ्यों के बारे में पुलिस रिपोर्ट पर ;

(ग) पुलिस अधिकारी से भिन्न किसी व्यक्ति से प्राप्त इस इत्तिला पर या स्वयं अपनी इस जानकारी पर कि ऐसा अपराध किया गया है।

(2) मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट किसी द्वितीय वर्ग मजिस्ट्रेट को ऐसे अपराधों का, जिनकी जांच या विचारण करना उसकी क्षमता के अंदर है, उपधारा (1) के अधीन संज्ञान करने के लिए सशक्त कर सकता है।”

12. श्री दवे ने यह दलील दी कि पुलिस रिपोर्ट और उसके संबंध में आक्षेप प्राप्त होने पर ही मजिस्ट्रेट किसी परिवाद याचिका के बारे में अपराधों का संज्ञान करने से संबंधित अन्य उपबंधों का अवलंब लिए बिना संहिता की धारा 204 के अधीन अपीलार्थियों को समन जारी कर सकेगा। श्री दवे ने यह दलील दी कि धारा 190(1)(ख) के अधीन पुलिस रिपोर्ट पर संज्ञान लेने के पश्चात् अगला प्रक्रम संहिता की धारा 204 के अधीन समन जारी करना होगा और इस विषय में कोई बीच के प्रक्रम नहीं हैं। तदनुसार, सुपुर्दगी मजिस्ट्रेट के पास संहिता की धारा 173(3) के अधीन पुलिस रिपोर्ट प्राप्त होने पर किसी सेशन द्वारा विचारणीय मामले में एकमात्र उपलब्ध मार्ग सेशन न्यायालय को मामला सुपुर्द करना होगा जो कि इसके पश्चात् संहिता की धारा 319 का अवलंब ले सकेगा चूंकि उसे आरोप पत्र के स्तंभ में नामित किसी अन्य व्यक्ति को उनके विरुद्ध नए साक्ष्य प्राप्त हुए बिना समन करने की कोई अन्य शक्ति नहीं थी। श्री दवे ने यह दलील दी कि संहिता की धारा 193 में निर्दिष्ट संज्ञान उस अपराध का नहीं होगा जिसकी बाबत मजिस्ट्रेट द्वारा पहले ही संज्ञान लिया जा चुका है बल्कि विचारण के लिए सेशन न्यायालय के मामले की सुपुर्दगी का संज्ञान होगा।

13. श्री दवे ने यह दलील दी कि संहिता की धारा 204 के उपबंधों को ध्यान में रखते हुए, जिसमें विद्वान् मजिस्ट्रेट के लिए किंचित मात्रा में विवेक का प्रयोग करना आवश्यक है, स्वतंत्र जांच कराकर अपने विवेक का प्रयोग करने की आवश्यकता बहुत कम थी। यह दलील दी गई थी कि चूंकि मजिस्ट्रेट को संहिता की धारा 190 के अधीन कार्यवाही करने की कोई शक्ति नहीं थी इसलिए मामला सेशन न्यायालय को सुपुर्द किया जाना है क्योंकि विद्वान् मजिस्ट्रेट के पास किसी अन्य कार्रवाई का सहारा लेने का कोई विकल्प नहीं बचा था। श्री दवे ने **रश्मि कुमार बनाम महेश कुमार भादा¹** वाले मामले में इस न्यायालय के विनिश्चय के प्रति निर्देश किया जिसमें संहिता की धारा 190, 200 और 202 के अधीन किसी अपराध का संज्ञान करने के प्रक्रम पर न्यायालय की शक्तियों का प्रश्न विचारार्थ उद्भूत हुआ था और यह अभिनिर्धारित किया गया था कि किसी अपराध का संज्ञान करने के प्रक्रम पर न्यायालय को केवल परिवाद में किए गए प्रकथनों पर विचार करना चाहिए क्योंकि न्यायालय से उस प्रक्रम पर

¹ (1997) 2 एस. सी. सी. 397.

किसी साक्ष्य की जांच करने या उसका मूल्यांकन करने की अपेक्षा नहीं है।

14. श्री दवे ने **इंडियन कैरेंट प्राइवेट लिमिटेड बनाम कर्नाटक राज्य और एक अन्य**¹ वाले मामले में इस न्यायालय के विनिश्चय के प्रति भी निर्देश किया जिसमें इस न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया है कि मजिस्ट्रेट ऐसी पुलिस रिपोर्ट के बावजूद कि किसी अभियुक्त के विरुद्ध कोई मामला नहीं बनता था, पुलिस अन्वेषण के अधीन साक्षियों के कथन को ध्यान में रखते हुए धारा 190(1)(ख) के अधीन अपराध का संज्ञान कर सकेगा और आदेशिका जारी कर सकेगा। इस न्यायालय के **अभिनंदन झा बनाम दिनेश मिश्रा**² वाले मामले में के विनिश्चय के प्रति भी निर्देश किया गया था जिसमें यही मत व्यक्त किया गया था। उक्त मामले में यह अभिनिर्धारित किया गया था कि मजिस्ट्रेट को पुलिस को यह निदेश देने की शक्ति नहीं थी कि वह आरोप पत्र प्रस्तुत करें जब कि पुलिस ने संज्ञेय अपराध का अन्वेषण करने के पश्चात् 1898 की संहिता की धारा 169 के अधीन की गई कार्रवाई की रिपोर्ट प्रस्तुत की थी कि अभियुक्त को विचारण के लिए भेजने के संबंध में कोई मामला नहीं बनता था।

15. श्री दवे ने **राज किशोर प्रसाद बनाम बिहार राज्य और एक अन्य**³ वाले मामले में इस न्यायालय के विनिश्चय के प्रति भी निर्देश किया जिसमें यह भी अभिनिर्धारित किया गया था कि संहिता की धारा 209 के अधीन किसी मामले को सुपुर्द करते समय मजिस्ट्रेट को संहिता की धारा 319 के अधीन या किसी अन्य उपबंध के अधीन शक्तियों का प्रयोग करते हुए किसी अन्य व्यक्ति को अभियुक्त के रूप में सहयुक्त करने की कोई अधिकारिता नहीं थी। इसके अलावा यह मत व्यक्त किया गया था कि संहिता की धारा 209 के अधीन किसी मजिस्ट्रेट के समक्ष की जाने वाली कार्यवाही कोई जांच नहीं होती है और उसके समक्ष रखी गई सामग्री साक्ष्य नहीं होती है। सुपुर्दगी पर ही सेशन न्यायालय संहिता की धारा 319 के अधीन अधिकारिता का प्रयोग कर सकता है और अपने द्वारा लेखबद्ध साक्ष्य के आधार पर किसी नए अभियुक्त को जोड़ सकता है। श्री दवे ने इस बात पर भी जोर दिया कि **स्विल लिमिटेड** (उपर्युक्त) वाले मामले में इस न्यायालय के विनिश्चय में जो कि निर्देश न्यायालय की जानकारी में

¹ (1989) 2 एस. सी. सी. 132.

² [1967] 3 एस. सी. आर. 668.

³ (1996) 4 एस. सी. सी. 495.

लाए गए मामलों में से एक है, यह अभिनिर्धारित किया गया था कि आरोप पत्र में अभियुक्त के रूप में उल्लिखित न किए गए किसी व्यक्ति को भी मजिस्ट्रेट द्वारा अपराध का संज्ञान करने के पश्चात् ही समन किया जा सकेगा यदि प्रथम इत्तिला रिपोर्ट, पुलिस द्वारा अभिलिखित कथन और अन्य दस्तावेजों को ध्यान में रखते हुए उसके विरुद्ध कुछ सामग्री पाई गई थी। यह भी अभिनिर्धारित किया गया था कि संहिता की धारा 319 ऐसी स्थिति में प्रवृत्त नहीं होती थी। श्री दवे ने यह दलील दी कि उपर्युक्त विनिश्चय में **राज किशोर प्रसाद** (उपर्युक्त) वाले विनिश्चय को ध्यान में नहीं रखा गया था जिसमें इससे बिल्कुल प्रतिकूल मत अपनाया गया था और इसलिए वह अनवधानता के कारण अपनाया गया मत था। श्री दवे ने यह दलील दी कि मजिस्ट्रेट द्वारा की गई संपूर्ण कार्यवाही विधि के उपबंधों के प्रतिकूल थी और इसलिए, इन मामलों में अपीलार्थियों को अभियुक्तों के रूप में समन करने वाले आदेश अभिखंडित किए जाने योग्य हैं।

16. राज्य की ओर से विद्वान् अपर महाधिवक्ता श्री राजीव गौड़ 'नसीम' द्वारा इस बात पर जोर देने की ईप्सा की गई थी कि संहिता की धारा 193 के अधीन सेशन न्यायालय संज्ञान करने और समन जारी करने के लिए हकदार था। निर्देश न्यायालय द्वारा जो कुछ उपदर्शित किया गया था उसके प्रतिकूल श्री गौड़ ने इस बात पर जोर दिया कि **किशन सिंह** (उपर्युक्त) वाले मामले में विधि का कथन सही रूप से किया गया था और सेशन न्यायालय मामले को सुपुर्दगी के लिए प्राप्त करने के पश्चात् संहिता की धारा 193 के अधीन संज्ञान करने और आरोप पत्र में अभियुक्तों के रूप में नामित न किए गए व्यक्तियों को समन जारी करने के लिए हकदार था।

17. इन मामलों में से तीन मामलों में बिहार राज्य की ओर से उपस्थित होने वाले विद्वान् स्थायी काउन्सेल श्री गोपाल सिंह ने यह दलील दी कि इस प्रश्न पर **किशोरी सिंह** (उपर्युक्त) वाले मामले में विचार किया गया था जिसमें **रंजीत सिंह** (उपर्युक्त) वाले मामले में अभिव्यक्त मत का अनुसरण किया गया था और यह अभिनिर्धारित किया गया था कि संहिता की स्कीम के अधीन ऐसे किसी मामले में जहां अपराध एकमात्र रूप से सेशन न्यायालय द्वारा विचारणीय है, जब पुलिस आरोप पत्र फाइल करती है और केवल कुछ व्यक्तियों को अभियुक्तों के रूप में शामिल करती है हालांकि कई और व्यक्तियों को प्रथम इत्तिला रिपोर्ट में नामित किया गया हो, तब मजिस्ट्रेट या सेशन न्यायाधीश को भी संहिता की धारा 319 के

प्रक्रम से पूर्व किसी ऐसे प्रक्रम पर उन्हें अभियुक्त व्यक्तियों के रूप में शामिल करने की अधिकारिता नहीं होगी जब विचारण के दौरान कुछ साक्ष्य या सामग्री एकत्र की गई थी ।

18. इस न्यायालय द्वारा सुने गए अनेक मामलों में से अंतिम मामले में, अर्थात्, चन्द्रिका प्रसाद यादव नामक व्यक्ति द्वारा बिहार राज्य के विरुद्ध फाइल की गई 2005 की दांडिक अपील सं. 1334 में प्रत्यर्थी सं. 2 - परिवादी की ओर से उपस्थित होने वाले विद्वान् काउन्सेल श्री के. के. त्यागी ने यह दलील दी कि मजिस्ट्रेट के पास संज्ञान लिए जाने के पश्चात् भी उन व्यक्तियों के विरुद्ध आदेशिका जारी करने की पर्याप्त शक्तियां थीं जिन्हें अभियुक्त के रूप में नहीं दर्शाया गया था किन्तु उन्हें आरोप पत्र के स्तंभ 2 में शामिल किया गया था । उसने उन विभिन्न विनिश्चयों के प्रति निर्देश किया जिनके प्रति अन्य काउन्सेल द्वारा पहले ही निर्देश किया जा चुका था ।

19. 2004 की दांडिक अपील सं. 865 में भी, प्रत्यर्थी सं. 2 (परिवादी) की ओर से उपस्थित होने वाले विद्वान् अधिवक्ता श्री शिशिर पिनाकी ने इस बात पर जोर दिया कि मजिस्ट्रेट को संविधान के अनुच्छेद 20 के अधीन कार्यवाहियों पर नियंत्रण निहित किया गया है और इसलिए संहिता की धारा 204 के अधीन आदेशिका जारी करने की कार्यवाही करने से पूर्व धारा 202 के उपबंधों का अवलंब लिए बिना संहिता की धारा 204 के अधीन समन जारी करना उसकी शक्तियों के भीतर था भले ही वह संहिता की धारा 173(3) के अधीन फाइल की गई पुलिस रिपोर्ट से सहमत नहीं था ।

20. चूंकि इस निर्देश में मुद्दा ऐसे मजिस्ट्रेट की शक्तियों के संबंध में है जिसे पुलिस प्राधिकारियों द्वारा संहिता की धारा 173(3) के अधीन रिपोर्ट प्रस्तुत की जाती है, इसलिए हमारे लिए कार्यवाहियां संस्थित करने के लिए अपेक्षित शर्तों से संबंधित संहिता के अध्याय 14 की स्कीम की परीक्षा करना आवश्यक है ।

21. धारा 190, जो कि इसमें इसके ऊपर उद्धृत की गई है, किसी प्रथम वर्ग मजिस्ट्रेट या उपधारा (2) के अधीन विशेषतया सशक्त किए गए किसी द्वितीय वर्ग मजिस्ट्रेट को तीन आकस्मिकताओं में किसी अपराध का संज्ञान करने के लिए सशक्त करती है । वर्तमान मामले में, हमारा संबंध धारा 190(1)(ख) के उपबंधों से है चूंकि पुलिस द्वारा संहिता की धारा

173(3) के अधीन पुलिस रिपोर्ट प्रस्तुत की गई है जिसमें एक अभियुक्त को विचारण के लिए भेजा गया है जबकि अन्य अभियुक्तों के नाम रिपोर्ट के स्तंभ 2 में सम्मिलित किए गए हैं। अभिलेख पर मौजूद सामग्री से प्रकट तथ्यों और संबंधित पक्षकारों की ओर से किए गए मौखिक निवेदनों से यह उपदर्शित होता है कि ऐसी पुलिस रिपोर्ट प्राप्त होने पर विद्वान् मजिस्ट्रेट ने सीधे ही मामला सेशन न्यायालय को सुपुर्द करने की कार्यवाही नहीं की थी बल्कि परिवादी की ओर से आक्षेप किए जाने पर, जिसे अभ्यापत्ति याचिका मान लिया गया था, संहिता की धारा 190, धारा 200 या धारा 202 के अधीन यथा-अनुध्यात कोई अतिरिक्त जांच किए बिना केवल पुलिस रिपोर्ट के आधार पर समन जारी करने की कार्यवाही की थी और उन अभियुक्तों को समन जारी किए थे जिन्हें आरोप पत्र के स्तंभ 2 में नामित किया गया था। विद्वान् मजिस्ट्रेट ने अन्वेषक अधिकारी द्वारा उन अभियुक्तों के विरुद्ध फाइल की गई अंतिम रिपोर्ट को स्वीकार नहीं किया था जिनके नाम स्तंभ 2 में शामिल किए गए थे क्योंकि उसे यह विश्वास हो गया था कि उनके विरुद्ध भी विचारण चलाने का प्रथमदृष्ट्या मामला साबित हो गया था और उसने अभियुक्त नफे सिंह के साथ अन्य अभियुक्तों को विचारण का सामना करने के लिए समन जारी किए थे। विद्वान् मजिस्ट्रेट द्वारा अपीलार्थियों को नफे सिंह के साथ विचारण में भेजने के लिए समन करने के लिए अपनाई गई प्रक्रिया से जो प्रश्न उद्भूत हुए हैं वे इसमें इससे पूर्व इस निर्णय के पैरा 4 में पहले ही उपवर्णित किए गए हैं।

22. जहां तक प्रथम प्रश्न का संबंध है, हम श्री चाहर और श्री दवे द्वारा दी गई इन दलीलों को स्वीकार करने में असमर्थ हैं कि पुलिस रिपोर्ट प्राप्त होने पर, जिससे यह दर्शित होता था कि मामला सेशन न्यायालय द्वारा विचारणीय है, मजिस्ट्रेट को मामला सेशन न्यायालय के विचारण के लिए सुपुर्द करने के सिवाय कोई अन्य कृत्य नहीं करना था और सेशन न्यायालय ही विचारण में किसी अन्य व्यक्ति को अभियुक्त के रूप में शामिल करने के लिए संहिता की धारा 319 का अवलंब ले सकता था। दूसरे शब्दों में, श्री दवे के अनुसार, धारा 190(1)(ख) के अधीन संज्ञान करने और संहिता की धारा 204 के अधीन अभियुक्तों को समन जारी करने के बीच कोई मध्यवर्ती प्रक्रम नहीं हो सकता था। ऐसे निर्वचन के प्रभाव के परिणामस्वरूप ऐसी स्थिति उत्पन्न होगी जहां पुलिस रिपोर्ट के स्तंभ 2 में नामित व्यक्तियों पर न तो सुपुर्दगी मजिस्ट्रेट का और न ही

सेशन न्यायालय का कोई नियंत्रण होगा जब तक विचारण धारा 319 के प्रक्रम तक नहीं पहुंच जाता । इसके अलावा, यदि सेशन न्यायाधीश अंततोगत्वा पुलिस रिपोर्ट के स्तंभ 2 में नामित व्यक्तियों के विरुद्ध सामग्री पाता है तो ऐसे व्यक्तियों के विरुद्ध विचारण नए सिरे से आरंभ किया जाना होगा जिसके परिणामस्वरूप न केवल विचारण दोहराया जाएगा बल्कि उसमें देरी भी होगी ।

23. हमारी राय में, **किशन सिंह** (उपर्युक्त) वाले मामले में अभिव्यक्त मत अधिक स्वीकार्य है चूंकि जैसा कि इसमें इसके पूर्व निर्दिष्ट मामलों में इस न्यायालय द्वारा अभिनिर्धारित किया गया है, मजिस्ट्रेट के पास उस अंतिम रिपोर्ट से, जो कि संहिता की धारा 173(3) के अधीन पुलिस अधिकारियों द्वारा फाइल की जा सकती है, असहमत होने की और पुलिस रिपोर्ट से असंबद्ध होकर अभियुक्त व्यक्तियों के विरुद्ध कार्यवाही करने की पर्याप्त शक्तियां हैं जो शक्ति सेशन न्यायालय के पास तब तक नहीं है जब तक कि कार्यवाही धारा 319 के प्रक्रम तक नहीं पहुंच जाती । उक्त स्थिति का परिणाम यह होगा कि यद्यपि मजिस्ट्रेट को संहिता की धारा 173(3) के अधीन फाइल की गई पुलिस रिपोर्ट से असहमत होने की शक्तियां प्राप्त थीं तथापि, वह ऐसी कार्यवाही करने का आश्रय लेने में निस्सहाय था जबकि सेशन न्यायाधीश भी विचारण के लिए भेजे गए अभियुक्तों से भिन्न किसी व्यक्ति के विरुद्ध कार्यवाही करने के लिए उस समय तक असमर्थ था जब तक साक्ष्य पेश नहीं कर दिए जाते और अभियुक्तों की ओर से साक्षियों की प्रतिपरीक्षा नहीं कर ली जाती ।

24. हमारी राय में, मजिस्ट्रेट को दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 173(3) के अधीन उसके समक्ष प्रस्तुत की गई पुलिस रिपोर्ट का संज्ञान लेने पर सेशन न्यायालय को मामला सुपुर्द करते समय भूमिका निभानी होती है । यदि मजिस्ट्रेट पुलिस रिपोर्ट से असहमत होता है तो उसके पास दो विकल्प हैं । वह उस अभ्यापत्ति याचिका के आधार पर जो फाइल की जा सकती है, कार्यवाही कर सकता है या वह पुलिस रिपोर्ट से असहमति दिखाते हुए आदेशिका जारी कर सकता है और अभियुक्तों को समन कर सकता है । इसके पश्चात्, यदि उसका यह समाधान हो जाता है कि रिपोर्ट के स्तंभ 2 में नामित व्यक्तियों के विरुद्ध कार्यवाही करने के लिए मामला बनता था तो उक्त व्यक्तियों के विरुद्ध विचारण करने की कार्यवाही कर सकेगा या यदि उसका यह समाधान हो गया था कि ऐसा मामला साबित

हो गया था जो कि सेशन न्यायालय द्वारा विचारणीय था तो वह मामले पर आगे कार्यवाही करने के लिए उसे सेशन न्यायालय को सुपुर्द कर सकेगा ।

25. अब हम इस तीसरे प्रश्न पर आते हैं कि मजिस्ट्रेट द्वारा कौन सी प्रक्रिया का अनुसरण किया जाना है यदि उसका यह समाधान हो गया था कि पुलिस द्वारा प्रस्तुत की गई अंतिम रिपोर्ट के बावजूद विचारण करने के लिए प्रथमदृष्ट्या मामला साबित हो गया था । ऐसी दशा में, यदि मजिस्ट्रेट ने अभियुक्त व्यक्तियों के विरुद्ध कार्यवाही करने का विनिश्चय किया था तो उसे पुलिस रिपोर्ट के आधार पर ही कार्यवाही करनी होगी और या तो मामले की जांच करनी होगी या यदि वह सेशन न्यायालय द्वारा विचारणीय पाया गया था उसे सेशन न्यायालय को सुपुर्द करना होगा ।

26. प्रश्न सं. 4, 5 और 6 एक-दूसरे से लगभग जुड़े हुए हैं । प्रश्न सं. 4 का उत्तर सकारात्मक होना चाहिए, अर्थात् यह कि सेशन न्यायाधीश विद्वान् मजिस्ट्रेट द्वारा उसे मामला सुपुर्द किए जाने पर दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 193 के अधीन समन जारी करने का हकदार था । संहिता की धारा 193 सेशन न्यायालय द्वारा अपराधों का संज्ञान करने के बारे में है और उसमें निम्न प्रकार उपबंध किया गया है :—

“193. अपराधों का सेशन न्यायालयों द्वारा संज्ञान — इस संहिता द्वारा या तत्समय प्रवृत्त किसी अन्य विधि द्वारा अभिव्यक्त रूप से जैसा उपबंधित है उसके सिवाय, कोई सेशन न्यायालय आरंभिक अधिकारिता वाले न्यायालय के रूप में किसी अपराध का संज्ञान तब तक नहीं करेगा जब तक मामला इस संहिता के अधीन मजिस्ट्रेट द्वारा उसके सुपुर्द नहीं कर दिया गया है ।”

इस धारा के मुख्य शब्द ये हैं कि “कोई सेशन न्यायालय आरंभिक अधिकारिता वाले न्यायालय के रूप में किसी अपराध का संज्ञान तब तक नहीं करेगा जब तक मामला इस संहिता के अधीन मजिस्ट्रेट द्वारा उसके सुपुर्द नहीं कर दिया गया है ।” उक्त उपबंध में यह आदिष्ट है कि प्रथमतः मामला मजिस्ट्रेट द्वारा सेशन न्यायालय को सुपुर्द किया जाना चाहिए । दूसरी शर्त यह है कि मामला उसे सुपुर्द किए जाने के पश्चात् ही सेशन न्यायालय आरंभिक अधिकारिता का प्रयोग करते हुए अपराध का संज्ञान कर सकता है । यद्यपि श्री दवे द्वारा यह बताने का प्रयास किया गया है कि धारा 193 में उपदर्शित संज्ञान किसी अपराध के संज्ञान के संबंध में नहीं है बल्कि विद्वान् मजिस्ट्रेट द्वारा पारित सुपुर्दगी आदेश के संबंध में है, तथापि,

धारा 193 के इन स्पष्ट शब्दों को ध्यान में रखते हुए कि सेशन न्यायालय उक्त धारा के अधीन अपराधों का संज्ञान कर सकता है हम इस दलील को स्वीकार करने के लिए तैयार नहीं हैं ।

27. अब हम अगले प्रश्न पर विचार करते हैं कि क्या धारा 209 के अधीन मजिस्ट्रेट के लिए मामला सेशन न्यायालय को सुपुर्द करने से पूर्व अपराध का संज्ञान करना अपेक्षित था । यह सुस्थापित है कि किसी अपराध का संज्ञान केवल एक बार किया जा सकता है । यदि मजिस्ट्रेट अपराध का संज्ञान करता है और इसके बाद मामले को सेशन न्यायालय को सुपुर्द करता है तो अपराध का नए सिरे से संज्ञान करने और इसके पश्चात् समन जारी करने की कार्यवाही करने का प्रश्न विधि के अनुसार नहीं है । यदि अपराध का संज्ञान किया जाना है तो वह या तो मजिस्ट्रेट द्वारा या सेशन न्यायालय द्वारा किया जा सकेगा । संहिता की धारा 193 में अत्यंत स्पष्ट रूप से यह उपदर्शित किया गया है कि जब विद्वान् मजिस्ट्रेट द्वारा मामला सेशन न्यायालय को सुपुर्द कर दिया जाता है तब सेशन न्यायालय आरंभिक अधिकारिता ग्रहण कर लेता है और सब कुछ उस अधिकारिता के ग्रहण करने के बाद होता है । अतः, धारा 209 के उपबंधों का पठन इस रूप में करना होगा कि विद्वान् मजिस्ट्रेट पुलिस रिपोर्ट से यह पता चलने पर कि मामला सेशन न्यायालय द्वारा विचारणीय है, मामला सेशन न्यायालय को सुपुर्द करने की निष्क्रिय भूमिका निभाता है । मजिस्ट्रेट द्वारा अंशतः संज्ञान करने और अंशतः विद्वान् सेशन न्यायाधीश द्वारा संज्ञान करने का कोई प्रश्न नहीं हो सकता है ।

28. मामले को उस दृष्टि से देखने पर हमें **किशन सिंह** (उपर्युक्त) वाले मामले में अभिव्यक्त दृष्टिकोण से सहमत होने में कोई हिचकिचाहट नहीं है कि सेशन न्यायालयों को उसे मामला सुपुर्द करने पर उन व्यक्तियों के विरुद्ध अपराधों का संज्ञान करने की अधिकारिता होती है जिन्हें अपराधियों के रूप में नामित नहीं किया गया है किन्तु जिनकी मामले में सह-अपराधिता अभिलेख पर उपलब्ध सामग्री से प्रकट होगी । अतः, सेशन न्यायाधीश धारा 209 के अधीन सुपुर्दगी पर साक्ष्य लेखबद्ध किए बिना भी पुलिस रिपोर्ट के स्तंभ 2 में दर्शाए गए व्यक्तियों को उन व्यक्तियों के साथ, जिन्हें पहले ही नामित किया गया है, विचारण में प्रस्तुत होने के लिए समन कर सकेगा ।

29. हम श्री दवे की इस दलील को भी स्वीकार करने में असमर्थ हैं

कि सेशन न्यायालय के पास उन व्यक्तियों के विरुद्ध कार्यवाही करने से पूर्व जिनके विरुद्ध विद्वान् मजिस्ट्रेट द्वारा मामला सेशन न्यायालय को सुपुर्द करते समय भेजे गए मामले के कागजपत्रों में अंतर्विष्ट सामग्री से प्रथमदृष्ट्या मामला साबित होता है, उस समय तक प्रतीक्षा करने के सिवाय कोई विकल्प नहीं होगा जब तक मामला दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 319 के प्रक्रम तक नहीं पहुंच जाता है ।

30. इस आशय के निर्देश का उत्तर कि क्या **किशन सिंह** (उपर्युक्त) वाले मामले में **रंजीत सिंह** (उपर्युक्त) वाला विनिश्चय सही था अथवा नहीं, यह अभिनिर्धारित करते हुए दिया जाता है कि **किशन सिंह** (उपर्युक्त) वाले मामले में किया गया विनिश्चय सही विनिश्चय था और विद्वान् सेशन न्यायाधीश आरंभिक अधिकारिता वाले न्यायालय के रूप में कार्य करते हुए विद्वान् मजिस्ट्रेट द्वारा पारित सुपुर्दगी आदेश के परिणामस्वरूप उसे पारेषित अभिलेखों के आधार पर धारा 193 के अधीन समन जारी कर सकता था ।

31. हमारे उपर्युक्त विनिश्चय के परिणामस्वरूप, निर्देश न्यायालय द्वारा अपनाया गया मत स्वीकार किया जाता है और यह अभिनिर्धारित किया जाता है कि **किशन सिंह** बनाम **बिहार राज्य** (उपर्युक्त) वाले मामले में किया गया विनिश्चय न कि **रंजीत सिंह** बनाम **पंजाब राज्य** (उपर्युक्त) वाले मामले में किया गया विनिश्चय विद्वान् मजिस्ट्रेट द्वारा दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 209 के अधीन मामला सेशन न्यायालय को सुपुर्द करने के पश्चात् सेशन न्यायालय की शक्तियों की बाबत सही विधि अधिकथित करता है ।

32. यह मामला इस निर्णय में हमारे द्वारा व्यक्त मतों के अनुसार लंबित दांडिक अपीलों का निपटारा करने के लिए तीन न्यायाधीशों की न्यायपीठ को प्रतिप्रेषित किया जाता है ।

तदनुसार आदेश किया गया ।

ग्रो.